दिखावे से परे : चरित्र और विवेक ही सच्ची महानता की पहचान

डॉ. मुकेश नायक

**'हंस बको देखे एक रंग, चरैं हरियारे ताल.
हंस क्षीर ते जानिए, बकुहि धरैं गे काल..'**

भारतीय संत परंपरा का यह अमूल्य दोहा जीवन का ऐसा शाश्वत संदेश देता है, जिसकी प्रासंगिकता आज के समय में पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है. देखने में हंस और बगुला दोनों एक समान श्वेत दिखाई देते हैं और दोनों एक ही जलाशय में विचरण करते हैं, किन्तु उनकी वास्तविक पहचान उनके बाहरी स्वरूप से नहीं, बल्कि उनके गुणों और स्वभाव से होती है. हंस को उसकी विवेकपूर्ण क्षमता के कारण जाना जाता है, जबकि बगुला केवल बाहरी समानता का प्रतीक बनकर रह जाता है. यही संदेश मनुष्य के जीवन पर भी समान रूप से लागू होता है.

आज का समाज दिखावे, प्रचार और बाहरी चमक-दमक से अत्यधिक प्रभावित है. सोशल मीडिया के युग में सफलता का आकलन अक्सर महंगे वस्त्रों, आलीशान जीवनशैली, लोकप्रियता और भौतिक उपलब्धियों से किया जाने लगा है. लेकिन किसी व्यक्ति का वास्तविक मूल्य उसके वस्त्रों, पद, प्रतिष्ठा या संपत्ति से नहीं, बल्कि उसके चरित्र, ईमानदारी, संवेदनशीलता, विनम्रता और नैतिक आचरण से निर्धारित होता है. जब कोई देख

भारतीय संत परंपरा का यह कालजयी संदेश आज भी उतना ही सार्थक है सफेद वस्त्र पहन लेने या आदर्शों की बातें कर लेने से कोई व्यक्ति महान नहीं बन जाता. वास्तविक महानता तब सिद्ध होती है, जब हमारे कर्म, निर्णय और चरित्र उसी पवित्रता और नैतिकता को प्रतिबिंबित करें, जिसका हम दावा करते हैं. हंस और बगुला देखने में भले एक जैसे हों, किंतु समाज और इतिहास सदैव उसी को याद रखते हैं, जिसकी पहचान उसके विवेक, सत्यनिष्ठा और उच्च चरित्र से होती है.

नहीं रहा होता, तब लिए गए हमारे निर्णय ही हमारे व्यक्तित्व का वास्तविक परिचय देते हैं.

जीवन निरंतर ऐसे अवसर प्रस्तुत करता है, जहाँ हमें सत्य और सुविधा, सिद्धांत और स्वार्थ, नैतिकता और लाभ के बीच चयन करना पड़ता है. ऐसे कठिन क्षणों में केवल ज्ञान पर्याप्त नहीं होता, बल्कि विवेक की आवश्यकता होती है. ज्ञान हमें जानकारी देता है, जबकि विवेक यह सिखाता है कि उस जानकारी का उपयोग कब, कहाँ और किस उद्देश्य से किया जाए. यही विवेक व्यक्ति को भीड़ से अलग पहचान दिलाता है.

सफलता का अर्थ केवल धन, शक्ति या ऊँचे पद प्राप्त करना नहीं है. वास्तविक सफलता वह है, जिसमें व्यक्ति अपने सिद्धांतों से समझौता किए बिना आगे बढ़े. छल-कपट और बेईमानी से मिली उपलब्धियाँ क्षणिक हो सकती हैं, परंतु वे स्थायी सम्मान और आत्मसंतोष नहीं दे सकतीं. इसके विपरीत, ईमानदारी, धैर्य और नैतिक साहस का मार्ग कठिन अवश्य होता है, लेकिन अंततः वही विश्वास, सम्मान और आत्मगौरव प्रदान करता है. हंस की भाँति विवेकशील व्यक्ति सदैव सुविधा नहीं, बल्कि श्रेष्ठता का चयन करता है.

आज का युवा वर्ग एक और गंभीर चुनौती का सामना कर रहा है लगातार तुलना की मानसिकता. दूसरों की उपलब्धियाँ देखकर स्वयं को कमतर समझना या हीन भावना का शिकार होना सामान्य होता जा रहा है. जबकि प्रत्येक व्यक्ति की यात्रा अलग होती है. किसी की नकल करके या केवल बाहरी प्रदर्शन से वास्तविक पहचान नहीं बनती. सच्चा व्यक्तित्व निरंतर सीखने, अनुशासित परिश्रम और उत्तम संस्कारों के विकास से निर्मित होता है.

यह दोहा हमें यह भी सिखाता है कि प्रत्येक समाज में अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के लोग साथ रहते हैं. केवल बाहरी व्यवहार देखकर किसी का सही मूल्यांकन नहीं किया जा सकता. व्यक्ति का वास्तविक स्वरूप कठिन परिस्थितियों में सामने आता है. जो संकट के समय दूसरों का साथ निभाता है, दूसरों की सफलता से ईर्ष्या नहीं करता और स्वयं सफल होने पर भी विनम्र बना रहता है, वही हंस के गुणों का वास्तविक प्रतिनिधि है.

मनुष्य का चरित्र उसकी संगति से भी निर्मित होता है. ईमानदार, सकारात्मक और विचारशील लोगों का साथ हमारे विवेक को मजबूत बनाता है, जबकि स्वार्थ, छल और नकारात्मकता से भरी संगति हमें अपने उद्देश्य से भटका सकती है. इसलिए मित्रों, मार्गदर्शकों और आदर्शों का चयन भी उतनी ही सावधानी से करना चाहिए, जितनी सावधानी से हंस दूध और पानी का विवेकपूर्ण पृथक्करण करता है.

प्रत्येक दिन आत्ममंथन का अवसर है. हमें यह पूछने के बजाय कि लोग हमें कितना सफल मानते हैं, स्वयं से यह प्रश्न करना चाहिए कि क्या हम एक बेहतर इंसान बन रहे हैं. सार्वजनिक प्रशंसा क्षणभंगुर होती है, लेकिन दृढ़ चरित्र और नैतिक आचरण से अर्जित सम्मान स्थायी होता है. इतिहास ने भी उन्हीं व्यक्तित्वों को अमर किया है, जिन्होंने अपने साहस, ईमानदारी और समाज के प्रति योगदान से पहचान बनाई.

यह दोहा आत्मनिरीक्षण की भी प्रेरणा देता है. दूसरों की कमियाँ खोजने से पहले हमें अपने विचारों, व्यवहार और निर्णयों का मूल्यांकन करना चाहिए. शुद्ध नीयत, विनम्र व्यवहार और नैतिक मूल्यों के प्रति अटूट प्रतिबद्धता ही ऐसा चरित्र गढ़ती है, जो समय की कसौटी पर खरा उतरता है.

अंततः जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि संसार की तालियाँ नहीं, बल्कि अपनी अंतरात्मा की स्वीकृति है. धन, पद और प्रसिद्धि समय के साथ समाप्त हो सकते हैं, किन्तु विवेक और चरित्र जीवनभर हमारे सबसे विश्वसनीय साथी बने रहते हैं. वे कठिन परिस्थितियों में हमारा संबल बनते हैं और सफलता के क्षणों में हमें अहंकार से बचाते हैं.

क्लास by बड़े भाई

छोटे सुख के लम्बे दु:ख

संदीप द्विवेदी
कवि/प्रेरक वक्ता/स्किल ट्रेनर

छोटे भाई, एक हैं जिन्हें मैं जानता हूँ.. वो जीवन में आनंद चाहते थे.. कोई ग़लत नही इसमें.. हर कोई ही चाहता है आनंद..तो उन्होंने जीवन में आनंद का बढ़िया जिन्जा नुस्खा निकाला.. वो जब स्कूल या कॉलेज में थे, खूब क्लास बंक करते थे.. उनका मानना था कि पढ़ाई से जीवन से आनंद ख़त्म होता है..रसहीन हो जाता है जीवन..फिर उन्होंने अपने आनंद की मात्रा बढाने के लिए दो चार नशे को अपने जीवन में प्रवेश दिया.. अब उनकी सुख की मात्रा दुगनी हो चुकी थी..फिर वो यहीं नही रुके..थोड़ा आगे बढ़े और थोडा गर्ल्स हॉस्टल की तरफ भी समय देने लगे.. इससे उनका आनंद तिगुना हो गया.. सब अच्छा चल रहा था.. फिर थोड़े समय सब अच्छा चलता रहा.. फिर शुरु होती है इस आनंद की साढ़े साती.. कॉलेज में फेल हो गये.. गर्ल्स हॉस्टल के आसपास आनंद का अनुभव करते हुए एक दिन पिट पिटा गये.. नशे का आनंद इतना हुआ कि उन्हें फेफड़े का ईलाज चालू कर पड़ा.. साथ में डॉक्टर ने इस चेतावनी भी दी कि अगर नशे की ओर देखा भी तो बची हुई दो चार महीने की उम्र अभी पूरी हो जाएगी.. तो यह था आनंद का एक रास्ता..

छोटे भाई, यह तो बस एक समझाने की बात थी.. हम सब इसी तरह के तुरंत आकर्षित करने वाले आनंद स्त्रोतों की तरफ जल्दी झुक जाते हैं और इनका परिणाम अंत में ऊपर की तरह होता है, उस आनंद का दुष्परिणाम हमें लम्बे समय तक भुगतना पड़ जाता है..

कहना यह चाहता हूँ अच्छी आदतों में आनंद खोजिए..अच्छे कामों में आनंद खोजिए.. हो सकता है यह शुरु में उबाऊ और उतनी आकर्षक न लगें लेकिन लम्बे समय में यह आपको आनंद सुख देंगे.. जैसे एक पौधा , जिसे आप लगाते हैं तो बहुत देख भाल करनी होती है , मुश्किल होती है लेकिन जब यही पौधा वृक्ष बन जाता है, तब सोचिये छाँव , फल सब आपको जीवन भर मिलता है.. मैंने कभी लिखा था -

**मत चुनना उसे ,
जिसके पास हो
मात्र आकर्षक वर्तमान
तुम चुनना उसे
जिसके पास हो
सुन्दर भविष्य**

कहानी

प्यार की जीत

श्रीकुमार दत

उस दिन सरकारी अस्पताल के आपातकालीन वार्ड में डॉक्टर राहुल वर्मा ड्यूटी पर थे. घड़ी में लगभग सुबह के ग्यारह बज रहे थे कि अचानक कुछ लोग दो अज्ञात किशोर-किशोरी को लेकर भागते हुए अस्पताल पहुँचे. दोनों की आयु लगभग अठारह-उन्नीस वर्ष रही होगी. चेहरे-मोहरे और पहनावे से वे मध्यमवर्गीय परिवार के लग रहे थे. दोनों के मुँह से झाग निकल रहा था, शरीर निढाल था और कोई प्रतिक्रिया नहीं थी. एक नज़र में ही स्पष्ट हो गया कि उन्होंने विषपान किया है. स्थिति को समझते ही अभिजीत ने बिना एक क्षण गँवाए उपचार आरम्भ कर दिया. पेट की सफाई (स्टमक वॉश) की गई, सलाइन चढ़ाई गई और एक के बाद एक आवश्यक इंजेक्शन दिए गए. सौभाग्य से उन्हें समय रहते अस्पताल पहुँचा दिया गया था. वे अभी भी गोल्डन ऑवर के भीतर थे, इसलिए विष पूरे शरीर में नहीं फैल पाया था. आशा की एक किरण दिखाई देने लगी.

उधर सूचना मिलते ही पुलिस भी अस्पताल पहुँच गई. उन्होंने दोनों की पहचान जाननी चाही, किन्तु तब तक वे अचेत थे. ड्यूटी पर मौजूद अधिकारी ने कहा, डॉक्टर साहब, जैसे ही इन्हें होश आए, हमें सूचित कर दीजिए. जाँच शुरू करनी होगी. दोपहर ढलते-ढलते सबसे पहले लड़के को होश आया. उसने आँखें खोलीं और कुछ क्षण धुँधली दृष्टि से चारों ओर देखने लगा. डॉक्टर राहुल उसके पास आए और धीमे स्वर में बोले, तुम अब सुरक्षित हो. घबराओ मत. क्या हुआ था, बता सकते हो? अभिजीत ने उससे बातचीत की और पूरी घटना जान ली.

लड़के का नाम मनीष था. वह एक गाँव के किसान का बेटा था. गाँव के लोग उसे एक ईमानदार, शांत और सरल स्वभाव के किशोर के रूप में जानते थे. उसके जीवन में अप्रत्याशित मोड़ तब आया, जब उसे अपने ही गाँव के विद्यालय के शिक्षक की बेटी और अपनी सहपाठिनी मीनाक्षी से प्रेम हो गया. मीनाक्षी चंचल, बुद्धिमती और पढ़ाई में मनीष की सदैव सहायता करने वाली लड़की थी. विद्यालय के बाहर दोनों की छोटी-छोटी बातें होने लगीं, नज़रों का मिलना, चुपचाप मुस्कुरा देना, टिफिन का खाना बाँटना और धीरे-धीरे वही मासूम शरारतें और बातचीत गहरे प्रेम में बदल गईं. किन्तु गाँव वालों की दृष्टि में उनका यह संबंध स्वीकार्य नहीं था. मीनाक्षी के पिता अत्यंत कठोर, अनुशासनप्रिय शिक्षक थे और प्रेम-विवाह के घोर विरोधी. दूसरी ओर मनीष के पिता भी यह कल्पना तक नहीं कर सकते थे कि उनके बेटे का विवाह एक उच्च जाति के शिक्षक की बेटी से हो. परिवारों के इस विरोध के कारण उनका प्रेम मानो लुकाछिपी का खेल बन गया. एक दिन प्रेम की घुटन और परिवारों के बढ़ते दबाव को सहन न कर पाने पर मीनाक्षी ने मनीष से कहा, चलो, कहीं दूर भाग चलते हैं. मीनाक्षी के प्रेम में डूबा मनीष बिना एक पल सोचे तैयार हो गया. गाँव की एक अँधेरी भोर में दोनों हाथों में हाथ डालकर एक अनजान शहर की ओर निकल पड़े.

दोनों ने शहर में एक नए जीवन का सपना देखा था, परन्तु वास्तविकता ने उनके सपनों को धीरे-धीरे तोड़ना शुरू कर दिया. पहली ही रात उन्हें समझ में आ गया कि शहर की ज़िंदगी इतनी आसान नहीं है. रहने की जगह, भोजन और रोज़मर्रा की हर आवश्यकता उनके लिए संघर्ष बन गई. साथ लाए थोड़े-से पैसे भी लगभग समाप्त हो गए. उनका अपरिपक्व प्रेम अब उन्हें निराशा और अनिश्चितता की ओर धकेल रहा था. एक दिन दोनों ने निश्चय किया कि अब जीने का कोई मार्ग शेष नहीं बचा है. जीवन का अंत कर देना ही उचित होगा. मीनाक्षी अपने घर से अपने प्रिय मिठाई लाई थी. उसी मिठाई में उन्होंने विष मिला दिया और साथ बैठकर खा लिया. उन्होंने मन ही मन सोचा कि उनके सारे दुःख और सारी बाधाएँ आज यहीं समाप्त हो जाएँगी. परन्तु नियति को कुछ और ही स्वीकार था. कुछ संवेदनशील राहगीरों ने उन्हें पार्क में एक पेड़ के नीचे अचेत अवस्था में पड़ा देखा और बिना देर किए अस्पताल पहुँचा दिया.डॉक्टर राहुल अविवाहित थे. वे अत्यंत स्नेही और मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण व्यक्ति थे. उन्होंने अनुभव किया कि यहाँ केवल शरीर का उपचार पर्याप्त नहीं है, बल्कि इन टूटे हुए मनों को भी सहारे की आवश्यकता है. उपचार पूर्ण होने और पुलिस की औपचारिकताओं से मुक्त होने के बाद अभिजीत दोनों को अपने घर ले आए. उन्होंने शांत स्वर में समझाया, तुम दोनों अभी बहुत छोटे हो. यह गृहस्थी बसाने की उम्र नहीं है. अपने घर लौट जाओ और परिवार से बात करो. किन्तु मनीष और मीनाक्षी दोनों अपने निर्णय पर अडिग थे. वे लौटने को तैयार नहींहुए. मीनाक्षी की आँखों से आँसू बह निकले. उसने कहा, हमारे परिवार हमें कभी स्वीकार नहीं करेंगे. मनीष ने भी कुछ नहीं कहा, केवल चुपचाप सिर हिला दिया.

उसी क्षण राहुल की स्मृतियों के द्वार खुल गए. वे अपने किशोरावस्था के प्रेम में खो गए. उन्होंने सोचा, यदि कभी उन्होंने भी मनीष जैसा साहस दिखाया होता, तो शायद अपना प्रेम खोना न पड़ता. इन दोनों के अटूट विश्वास और दृढ़ निश्चय ने उन्हें भीतर तक छू लिया. उन्होंने निश्चय किया कि इन दो निष्कलुष प्रेमियों का प्रेम असफल नहीं होने देंगे. राहुल ने पुलिस की सहायता से दोनों परिवारों से संपर्क किया. उन्होंने धैर्यपूर्वक सबको समझाया कि यह संबंध किसी क्षणिक आकर्षण का नहीं, बल्कि सचे और निष्कलुष प्रेम का है. धीरे-धीरे दोनों परिवारों को भी यह समझ आने लगा कि केवल कठोरता और दंड से किसी समस्या का समाधान नहीं होता. अंततः दोनों परिवारों ने राहुल से वचन दिया कि वे मनीष और मीनाक्षी को अलग नहीं करेंगे तथा उचित समय आने पर उनका विवाह करा देंगे.

मनीष और मीनाक्षी की आँखों से इस बार खुशी के आँसू बह निकले. राहुल के मन में भी एक गहरा संतोष उतर आया. उन्होंने केवल दो जीवन ही नहीं बचाए थे, बल्कि उन्हें उनके सपनोंकी ओर लौटने का अवसर भी दिया था. उन्होंने अनुभव किया कि प्रेम के सामने समाज और परिवार की दीवारें भी एक दिन ढह सकती हैं, यदि मन में विश्वास और साहस हो. प्रेम कभी समाप्त नहीं होता; उसे केवल समय और साहस की आवश्यकता होती है. कुछ दिनों बाद मनीष और मीनाक्षी अपने घर की ओर लौट चले. इस बार उनकी आँखों में भय नहीं, बल्कि विश्वास और आशा थी. उनका प्रेम परिस्थितियों के आगे पराजित नहीं हुआ था. राहुल दूर खड़े उन्हें जाते हुए देख रहे थे. उनका हृदय अपार आनंद और शांति से भर उठा. उन दोनों के प्रेम को बचाकर मानो उस दिन वे अपने खोए हुए प्रेम का दर्द भी कुछ क्षणों के लिए भूल गए.

गजल

रश्मि सक्सेना

आदमी के भेष में बैठा
हुआ शैतान है .मुस्कुराहट , छल-
कपट की अब नई पहचान है .

बेवफाई इश्क के दर पर खड़ा
मेहमान है.
गुल खिलाना प्यार का होता नहीं
आसान है.

बज्म में अपनी सुनाना तो बहाना
है गजल-
हुस्न का दीदार करना आपका
अरमान है.

बादलों की ओट में है चाँद जाकर
छुप गया-
नूर चेहरे का तुम्हारा देखकर
हैरान है .

रश्मि करती साथ सूरज के ही
क्यों अठखेलियाँ-
पूछता यूँ फूल से भँवरा बड़ा
नादान है .

गजलें

शिल्पी पचौरी

(1)
क्यों डरें जिंदगी में क्या होगा
बेवजह फिक्र से भी क्या होगा.

वो किसी पर करे यकीं क्यों कर
जो किसी से कभी छला होगा.

जीतना भी तो उसके हक में है
वक्त के तौर जो ढला होगा.

बोलने में नहीं झिझकता है
फलसफा वो बहुत पड़ा होगा.

चेहरा उसका खिला सा लगता है
क्या सुना जिक्र मीत का होगा.

(2)
रखेगा याद सारा ये जमाना
हमारा खूबसूरत सा फ़साना.

दिलों की बात जब होने लगे तो
समां लगता है कितना शायराना.

ख्यालों में तेरे यूँ हम हैं डूबे
परिंदा रुह का हो खुद बेगाना.

बड़ी खूबी से रिश्ता है निभाया
सिखाया मुश्किलों में मुस्कुराना.

करूँ उनकी इबादत अब मैं कैसे
खुदा से जो मिला है इक खजाना.

अदा औरों से तो है हटके तेरी
बनाया है जो मुझको आशिकाना.

उसे दे दूं मैं सब खुशियां जहाँ की
बना दे चाहे मुझको तू दीवाना.

लघु कथाएं

मेहनत

अचला गुप्ता

सारिका ने जब राधा को घरेलू कामकाज में सहायता के लिए रखा तभी उसने बता दिया था कि काम तो मैं ही करूंगी पर कभी कभी मेरी सासु मां भी आया करेंगी काम करने. पहले तो सारिका ने मना किया पर यह सोच कर हां कर दी कि जल्दी काम हो जाएगा. कभी कभी सास भी बहू के साथ आती और दोनों मिलकर अच्छी तरह काम निपटा कर चलीं जातीं. उन्हीं दिनों सारिका की बिटिया मायके आई.साथ में नन्ही नातिन भी आई. बर्तन कुछ ज्यादा ही निकल रहे थे पर राधा ने कभी कुछ नहीं कहा. महीना जब खत्म हुआ तब सारिका ने राधा को दो सौ रुपए ज्यादा दिए.राधा ने सारिका से कहा,दीदी, मेरी सासु मां को मत बताइएगा कि आपने मुझे ज्यादा रूपए दिए हैं. ऐसा क्यों कह रही हो राधा? सारिका ने आश्चर्य से पूछा.दीदी, आपको क्या बताऊं! मुझे काम करने के जितने भी रूपए मिलते हैं,सब मेरे ससुराल वाले रख लेते हैं. मुझे चूड़ियां खरीदने के लिए भी उनसे पैसे मांगने पड़ते हैं. आपने जो रूपए दिए हैं, उन्हें मैं छुपा कर जमा करके रखूंगी.

राधा की आंखें डबडबा गई थीं.सारिका हतप्रभ रह गई थी सब सुनकर. अपनी मेहनत के रूपयों पर हक जताने की? हिम्मत राधा में क्यों नहीं थी,वह बखूबी समझ रही थी. मैं जा रही हूं दीदी,राधा ने कहा और दरवाजा बंद कर गई पर सारिका के मन में अभी भी उथल-पुथल मची हुई थी.

जेबकतरे

सुरेश सौरभ

अपने पपड़ी पड़े होठों पर जीभ फिराते हुए, मटमैली आंखों से मंदिर में बैठे पुजारी को उसने ताका, वह करारे नोट गिन रहा था. नोट गिन कर अपनी जेब में धरे. मिठाई फल प्रसाद आदि अपने झोले में सब समेटा. मंदिर पर ताला जड़ा. चलने उद्यत हुआ, तब वह पुजारी को कातर दृष्टि से देख उं उं करके अपनी उंगलियों का कौर बना अपने मुंह की ओर लाया. पुजारी ने विस्फारित नेत्रों से उसकी ओर देख भद्दी सी गाली दी-अब जेब कतरे भी भेस बदल-बदल कर मंदिर तक आने लगे हैं, चल भाग यहाँ से.

खट् खट् खट् ..अपना डंडा खटखाते हुए वह बूढ़ा मंदिर के आगे बढ़ा, अंदर ताले में बंद भगवान की मूर्ति को ताकते हुए आगे बढ़ता गया, पपड़ी पड़े सूखे होठों से आह भरी-हे! भगवान यह जेबकतरे मंदिरों में क्यों आने लगे. उसकी आह मंदिर के ताले को बेध कर भगवान् के हृदय से जा टकरायी.

पुस्तक समीक्षा

बहुविषयक घटनाओं से परिपूर्ण छाया त्रिवेदी जी की कृति

बादल का टुकड़ा

जबलपुर मध्यप्रदेश की शिक्षाविद, साहित्यकार, समाजसेवी श्रीमती छाया त्रिवेदी जी की कृति 'बादल का टुकड़ा' एक लघुकथा संग्रह है. पाथेय प्रकाशन, जबलपुर, म.प्र., भारत से प्रकाशित है. इसमें विभिन्न प्रसंगों, विविध घटनाओं को आत्मसात कर लेखिका ने अपनी लघुकथाओं को एक माला में पिरोया है. लघुकथा को जब पाठक पढ़ता है तो वह पूर्णतः भाव विभोर हो जाता है और निर्दिष्ट प्रसंग तक पहुँच जाता है. अपनी कल्पनाशीलता के सहारे घटनाक्रम तक पहुँचता है.संक्षिप्त, सारगर्भित कुछ सत्य घटनाक्रम के साथ वास्तविक लोक कथाएँ हृदय को छूती हैं तो कुछ काल्पनिक कथाएँ मन को झकझोर देती हैं.

यह नब्बे लघुकथाओं का संग्रह 'बादल का टुकड़ा' कहानी की तर्ज पर आगे बढ़ता है जिसमें सामान्यतः केवल कुछ ही पात्रों को दृष्टिगत रखते हुए बिंब चित्र खींच कर संवेदनात्मक वर्णन किया गया है. श्रीमती छाया त्रिवेदी जी की लघुकथाएँ केवल एक-दो दृश्यों में बंधी नहीं हैं वरन् समाज के विभिन्न पहलुओं, सामाजिक बदलावों, ज्वलंत समस्याओं और मानवीय मूल्यों को व्यक्त करती हैं.श्रीमती छाया त्रिवेदी जी की लघुकथाएँ, पाठक के लिए एक ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा छाया जी एक संस्कृति से खुद बात करती, विचारती और लिखती हैं और इस तरह एक लेखिका अपने मूल्यों को कायम रखती है. प्रत्येक कथा के माध्यम से छाया जी, अपनी सोच-विचार, पहचान, मन:स्थिति, संवेदनाएँ और मनोबल को लिखित रूप से प्रदर्शित करती हैं. 'बादल का टुकड़ा' लघुकथा संग्रह में आ. छाया त्रिवेदी जी ने स्वरचित लघुकथाएँ संग्रहीत की हैं. इन लघुकथाओं में जीवन के विभिन्न पक्षों के झंझावातों, कठिनाइयों, परेशानियों को बखूबी प्रस्तुत किया है. आपकी लघुकथाएँ कहीं मार्मिक हैं तो कहीं कुरीतियों की विरोधी तो कहीं भ्रष्टाचार विरोधी संदेश समाज के समक्ष प्रस्तुत करती हैं. आपने अपनी लघुकथाओं में सामाजिक परिवेश का चित्रण भी बहुत ही सुंदर ढंग से किया है.

कुछ लघुकथाओं के नाम: ठुआभार, संकट की पाठशाला, मैं आतंकी नहीं हूँ, नियति, मिलेट्स कुटकी, गोबर, मोचीवाला, कबाड़, कुली, प्रसाद, गंगा, विलुप्त, मंगल मूर्ति, प्रेरणा, असंभव, दशरथ, बिजुरिया, हाथी के दाँत, मानस पुत्र, विश्वासघात, माँ, देहरी, शगुन, प्रतीक्षा, कृतज्ञता, ढोंगी, निष्पक्ष, हम पाँच, गुरु पूर्णिमा, गंगाजल, संकल्प, प्यास, प्रायश्चित, कृष्णकुंज, हिटलर दादी, भोले बाबा, खीरट्ठ आदि. अतिअल्प शीर्षक होने के बाद भी ये लघुकथाएँ गागर में सागर भरती हैं और सुंदर सार्थक संदेश देती हैं. छाया त्रिवेदी जी ने लघुकथा लेखन में अपने भावों को मनोयोग से पिरोया है. जीवन के संघर्षों से सजाया है. यही वजह है कि आ. छाया त्रिवेदी जी की लघुकथाएँ पाठकों के मन को छूती हैं साथ ही घटनाओं एवं भावों की अमिट छाप पाठक के मन में छोड़ती हैं.

समीक्षा :- डॉ. मुकुल तिवारी
एम.एस.सी. रसायन शास्त्र, एम.एड., एम. ए. हिंदी साहित्य, पी-एच.डी. रसायन शास्त्र, एल.एल.बी.
पूर्व प्राचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रभारी प्रयोजन मूलक हिंदी
पं. बालमुकुंद त्रिपाठी मार्ग, राम मन्दिर के पास, दीक्षितपुरा, जबलपुर, म.प्र., भारत

संपादकीय बोर्ड | प्रबंध संपादक : सुमीत माहेश्वरी, समूह संपादक : क्रांति चतुर्वेदी